जेंडर सम्बन्धों में बदलाव पुरुषों की भी ज़रूरत है

सतीश कुमार सिंह

महिला स्वास्थ्य में सुधार के लिए पुरुषों को जोड़ा जाना चाहिए इस विषय पर आज भी बहस चल रही है। बहुत सारी संस्थाओं, मीडिया और सरकार की यही राय है कि महिलाओं के मातृत्व स्वास्थ्य व प्रजनन व यौनिक स्वास्थ्य में पुरुष रोड़ा है, बाधक है और उन्हें यदि साथ में जोड़ लिया जाये तो लक्ष्य प्राप्त करना आसान होगा। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या उन सभी का इस मत पर विश्वास है या वे जल्दी से कम मेहनत करके अपना लक्ष्य पूरा कर लेना चाहते हैं।

यदि हम उनके इस चाहत व प्रयास का थोड़ा विश्लेषण करते हैं तो हमें पता चलता है कि यह सोच आधी-अधूरी है। ये सभी लोग लक्ष्य प्राप्ति के लिए पुरुष के व्यवहार में बदलाव की चाहत रखते तो हैं, किन्तु इसमें उनका विश्वास कम ही दिखता है। कहीं न कहीं 1975 के दौरान का डर पूरी तरह कम नहीं हो पाया है,जिसमें परिवार नियोजन के लिए बहुत बड़े पैमाने पर पूरी आक्रामकता के साथ पुरुष नसबन्दी का उपयोग किया गया था।

हम सभी लोग जो महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए चिंतित हैं उन्हें मिल कर इस चाहत को विश्वास आधारित बनाना होगा। हमें यह भी समझना होगा कि कोई पुरुष क्यों इस पूरे झमेले में पड़े, वह अपनी स्वतंत्र ज़िन्दगी को खटाई में क्यों डाले? मैं इसे जब और समझने का प्रयास करता हूं तो सबसे पहले मुझे यह समझना पड़ता है कि क्या पुरुष ऐसा चाहेंगे? इसका उल्टा भी सोचा जा सकता है कि आख़िर पुरुष ऐसा क्यों नहीं चाहेंगे कि एक ऐसी व्यवस्था हो जिसमें सभी स्वस्थ हों और महिलाएं विशेष रूप से खुशहाल। इसे परखने के लिए मुझे अपने इस तरफ़ की यात्रा के अनुभवों की पड़ताल करनी पड़ेगी।

मुझे आज भी याद है कि 2001 में लखनऊ में सी.ई.डी.ए.डब्ल्यू. पर जागरूकता बढ़ाने के लिए अभियान "पूरा

नागरिक, पूरे अधिकार" चलाया जा रहा था जिसमें सहयोग के साथ उत्तर प्रदेश की कई नारीवादी संस्थाए जुड़ी थीं। हम लोग एक कार्यक्रम लखनऊ के स्वास्थ्य सचिवालय के सामने करने वाले थे जिसमें स्वास्थ्य निदेशक द्वारा एक पोस्टर का विमोचन किया जाना था। कार्यक्रम मे दौरान स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों के साथ कई कर्मचारी भी थे। हम लोगों ने सार्वजनिक तौर पर यह पूछा कि यहां उपस्थित पुरुषों में से कितने पुरुषों ने अपनी नसबंदी कराई है तो तीन सामाजिक कर्मियों के अलावा किसी ने भी हाथ नहीं उठाया। यह एक कड़वा सच है कि जो विभाग परिवार नियोजन में पुरुषों की भागीदारी सुनिश्चित कराना चाहता है उसमें उन्हीं का विश्वास नहीं है। इसलिए तो कुल लक्ष्य का 10 प्रतिशत पुरुष नसबन्दी रखा जाता था जिसमें से शायद एक प्रतिशत ही पूरा हो पाता था।

इससे एक सीख तो निकली की हमें इस बदलाव पर लोगों का विश्वास बढ़ाना होगा तथा पुरुषों की भागीदारी के सार्वजनिक भी करना होगा।

इस संदर्भ में जब कई नीतियों को प्रभावित करने वाले लोगों से बात होती रही है तो हमेशा यह प्रश्न उठता रहा

सभी फ़ोटोः सीएचएसजे, नई दिल्ली

है कि हम जो बात कहना चाहते हैं कि पुरुषों की भागीदारी महिला स्वास्थ्य में बढ़ानी चाहिए और यह सम्भव है पर हमारे देश में इस बात के ठोस सबूत नहीं है या जो सबूत हैं वे बहुत ही कमज़ोर हैं।

इस सबूत की खोज और अपनी समझ निखारने के लिए हमने अलग-अलग समय पर उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र व मध्यप्रदेश में प्रयास किए। इस सीख की यात्रा में यह समझ में आया कि समूह में बहुत सारे पुरुष हैं जो एक पितृसत्तात्मक व्यवस्था में असहज महसूस कर रहे हैं। वे भी एक ऐसा सपना देखना चाहते हैं जहां पुरुष एक इंसान के रूप में प्रतिबिंबित हो। बहुत सारे पुरुष हैं जो अपने जीवन साथी के साथ बच्चों के साथ भावनात्मक रूप से नज़दीक रहना चाहते हैं। और उनकी यह चाहत पितृवादी समाज को स्वीकार्य नहीं है। इस समाज को यह डर लगता है कि यदि पुरुष इतने भावुक व नज़दीकी रिश्ते में महिला के साथ आ गया तो पूरा नियंत्रण जो पुरुषों के पास है वह खिसक जाएगा।

अब प्रश्न है कि एक तरफ समाज पूरा नियंत्रण पुरुष के हाथ में रखना चाहता है और दूसरी तरफ़ महिलाओं के अच्छे स्वास्थ्य के सपने देखता है। पर समाज में बगैर महिला-पुरुष के रिश्ते बदले, यह कैसे सम्भव हो सकता है? इसका मतलब हमें पुरुषों को कंडोम बांटने या केवल नसबन्दी कराने के लिए प्रेरित करने के बजाय पुरुषों के साथ महिला पुरुष के सम्बन्ध बेहतर पर काम करना होगा। कुछ लोग हर समस्या के जल्दी समाधान की दवाई ढूंढना चाहते हैं और उन्हें लगता है कि कुछ आकर्षक प्रचार करके पुरुषों को बदला जा सकता है। पर यह तो भ्रम है। यह कोई साबुन से हाथ धोने या कोलगेट से दांत साफ़ करने का मामला नहीं है। यह तो महिला-पुरुष के बीच सत्ता सम्बन्धों का मुद्दा है और सत्ता सम्बन्ध बदले बगैर कोई सकारात्मक दूरगामी भागीदारी सम्भव नहीं है।

सत्ता सम्बन्धों को बदलने में एक बड़ी समस्या परिवार व समुदाय के बुजुर्ग व समवयी महिला-पुरुष दोनों हैं क्योंकि इन लोगों ने कभी न तो देखा, न सोचा था और न ही सोचना चाहते हैं। जब कभी कोई इक्का-दुक्का व्यक्ति कुछ नया करके दिखाना चाहता है या नए तरीक़े से जीना चाहता है तो उसे बेकार पुरुष का तमगा दिया जाता है। उसे कमतर पुरुष, जोरू का गुलाम आदि-आदि कहा जाता है। हम लोगों ने अपने काम से सीखा कि ये पुरुष जब तक अकेले-अकेले उदाहरण बनने का प्रयास करेंगे तब तक उन्हें हतोत्साहित किया जाता रहेगा। लेकिन यही पुरुष जब सामूहिक रूप से सत्ता सम्बन्ध को समझकर समानता आधारित व्यवहार करना प्रारम्भ करेंगे तो यह एक नया सामाजिक मापदण्ड बन जायेगा। यह बात कई पुरुष समूहों ने उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश व महाराष्ट्र में साबित करके दिखाई है।

हमने यह भी सीखा कि यदि पुरुष ज़िम्मेदार व संवेदनशील बनता है तो ऐसा नहीं है कि वह एक क्षेत्र में बनेगा व दूसरे क्षेत्र में नहीं। जैसे जो समूह सत्ता सम्बन्ध पर विश्लेषण करता है तथा स्वयं पर व्यक्तिगत व सामूहिक चिंतन करता है वह एक समता आधारित व न्याय संगत परिवार व समुदाय की कल्पना करने तथा उस तरफ़ बढ़ने का प्रयास करता है। तब पुरुष अपने जीवन साथी के बारे में सोचने लगता है कि उसके प्रजनन स्वास्थ्य व पूर्ण स्वास्थ्य में उसकी भूमिका क्या रही है।

हमने यह भी सीखा की जब तक पुरुष छिप-छिपकर या अकेले में बदला हुआ व्यवहार करता है तब तक दूर

तक परिणाम नहीं जा पाता। अतः पुरुषों को भी अपना व्यक्तिगत विश्वास व व्यवहार को सार्वजनिक करना पड़ेगा तभी बदलाव में दम व गति दोनों आती है। हमने पाया कि केवल समूह में एक दूसरे से सीखने वाले पुरुष ही अपनी पत्नी के इलाज के लिए या गर्भावस्था में जांच, टीका के लिए स्वास्थ्य केन्द्र नहीं ले जाते, बल्कि उनके देखादेखी दूसरे पुरुष भी यही व्यवहार अपनाना शुरू करते हैं, क्योंकि उनमें झिझक दूर होती है।

हमने कई पुरुषों की कहानियां इकठ्ठी करनी शुरू की और पाया कि पुरुषों ने अपने पत्नी के साथ बदले सम्बन्धों में अपना नुकसान नहीं पाया। सभी ने बताया है कि बदले सम्बन्धों का आनन्द उठाया है, उन्हें इससे बहुत फ़ायदा हुआ है। यानी पुरुष महिलाओं के जीवन व स्वास्थ्य सुधारने का काम नहीं करते बल्कि अपनी खुद की ज़िन्दगी सुधारने का काम करते हैं।

एक सदस्य ने बताया कि "मेरी जेंडर, सत्ता सम्बन्ध, मर्दानगी व यौनिकता पर समझ बढ़ने से जबरन यौन सम्बन्ध बिल्कुल रूक गया है। परिवार में निर्णय में महिलाएं भी भागीदारी निभाने लगीं और मुझे यह अहसास हुआ कि महिलाओं का यौन संबंध के लिए हां या ना कहने का अधिकार है और मुझे उसका सम्मान करना चाहिए।"

"जब मेरी पत्नी पहली बार गर्भवती हुई तो मैं उसकी कोई परवाह नहीं करता था और न ही कोई मदद करता था। मेरी लापरवाही का परिणाम मेरे बच्चे की मौत के रूप में हुआ। तीन साल बाद मैं समझदार परियोजना की प्रक्रियाओं से जुड़ा। जब दूसरी बार मेरी पत्नी गर्भवती हुई तो मैं उसके काम में हाथ बंटाने लगा और उसके स्वास्थ्य की देखभाल करने लगा। मैंने उसके साथ टीकाकरण के लिए जाना प्रारम्भ किया और प्रसव के समय भी उसके साथ गया। अभी मेरा बेटा दो साल का है। मैं उसकी देखभाल करता हूं, उसे नहलाता हूं, उसे खिलाता हूं और उसके साथ खेलता भी हूं। मैं अस्थाई गर्भनिरोध का खुद इस्तेमाल करता हूं। आज मैं और मेरी पत्नी खुशहाल ज़िन्दगी जी रहे हैं।''

हनुमान सिंह, *सिधी, मध्यप्रदेश (समूह लीडर)*

एक साथी ने बताया "मेरे परिवार में महिलाएं सभी पुरुषों के खाने के बाद खाती थीं। मैंने कभी अपनी पत्नी के स्वास्थ्य के बारे में सोचा ही नहीं। समूह में सीखने के बाद जब अपनी भूमिका पर चिंतन किया तो बहुत बुरा लगा। मैंने तुरंत अपना व्यवहार बदला। और अपनी पत्नी के साथ घर के काम में हाथ बंटाने लगा। घर में खाने की व्यवस्था में बदलाव लाया। मुझे अहसास हुआ कि महिलाएं अपनी बीमारी की बातें क्यों छिपाती हैं। वे पूरी तरह मेरे पर निर्भर हैं और इसी कारण उनका स्वास्थ्य काफ़ी खराब रहता है। मेरे व्यवहार व सोच में बदलाव से न केवल मेरे लिए बल्कि मेरे पूरे परिवार के लिए एक स्वस्थ माहौल तैयार हो पाया। मेरे व पत्नी के बीच में विश्वास भी बढ़ा है।"

ग्रामीण क्षेत्र चाहे उत्तर प्रदेश या मध्य प्रदेश का हो या कुछ मामलों में काफ़ी अग्रणी कहा जाने वाला महाराष्ट्र का हो जहां महिलाओं के स्वास्थ्य पर न तो पुरुषों को बात करने व चिंता करने की ज़रूरत समझी जाती थी और न ही आज़ादी थी। वहीं जहां जहां पुरुषों के साथ मर्दानगी, जेंडर, यौनिकता व स्वास्थ्य पर सघन रूप से काम हुआ है वहां काफ़ी पुरुष व्यक्तिगत बदलाव को सार्वजनिक कर रहे हैं। महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए परिवार में तो पहल कर ही रहे हैं, स्वास्थ्य सुविधाओं की मांग व गुणवत्तापूरक स्वास्थ्य सुविधा की सामूहिक निगरानी भी कर रहे हैं। इससे ए.एन.एम व आशा के साथ उनके सम्बन्ध भी बेहतर हुए हैं।

यह देखकर हम इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि पुरुषों को केवल दोषी करार कर छोड़ देने से बात बहुत आगे नहीं बढ़ने वाली है। बल्कि उनकी मेन्टरिंग कर तथा अनुकूल वातावरण तैयार कर सामाजिक मानदण्ड बदलने की ज़रूरत है। इससे केवल महिला हिंसा ही नहीं कम होगी बल्कि महिलाओं का स्वास्थ्य भी सुधरेगा। पुरुष महिलाओं के नेतृत्व को घर में स्वीकारना सीखेंगे तथा बेटियों के साथ की सपना देखेगें जो पुरुषों की भी ज़रूरत है।

सतीश कुमार सिंह *सेंटर फ़ॉर हैल्थ एण्ड सोशल जस्टिस के निदेशक हैं।*